ॐ

सिरि-भगवंत-पुप्फदंत-भूदबलि-पणीदे

छक्खण्डागमे

जीवट्ठाणं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइया टीका

धवला

संपहि संत-सुत्त-विवरण-समत्ताणंतरं तेसिं परुवणं भणिस्सामो। परुवणा णाम किं उत्तं होदि? ओघादेसेहि गुणेसु जीवसमासेसु पज्जत्तीसु पाणेसु सण्णासु गदीसु इंदिएसु काएसु जोगेसू वेदेसु कसाएसु णाणेसु संजमेसु दंसणेसु लेस्सासु भविएसु अभविएसु सम्मत्तेसु सण्णि-असण्णीसु आहारि-अणाहारीसु उवजोगेसु च पज्जत्तापज्जत्त-विसेसणेहि विसेसिदूण जा जीव-परिक्खा सा परुवणा णाम। उत्तं च---

गुण जीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणाओ य।

उवजोगो वि य कमसो वीसं तु परुवणा भणिया१ (गो. जी. २)।।२२२।।

सत्प्ररुपणाके सूत्रोंका विवरण समाप्त हो जानेके अनन्तर अब उनकी प्ररुपणाका वर्णन करते हैं---

शंका --- प्ररुपणा किसे कहते हैं?

समाधान --- सामान्य और विशेषकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें, जीवसमासोंमें, पर्याप्तियोंमें, प्राणोंमें, संज्ञाओंमें, गतियोंमें इन्द्रियोंमें, कायोंमे, योगोंमें, वेदोंमें, कषायोंमें, ज्ञानोंमें, संयमोंमें, दर्शनोंमें, लेश्याओंमें, भव्योंमें, अभव्योंमें; सम्यक्त्वोंमें, संज्ञी-असंज्ञियोंमें, आहारी - अनाहारियोंमें और उपयोगोंमें पर्याप्त और अपर्याप्त विशेषणोंसे विशेषित करके जो जीवोंकी परीक्षा की जाती है, उसे प्ररुपणा कहते हैं। कहा भी है---

गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, चौदह मार्गणाएँ और उपयोग, इसप्रकार क्रमसे वीस प्ररुपणाएँ कही गई हैं ।।२२२।।

सेसाणं परुवणाणमत्थो वुत्तो । पाण-सण्णा-उवजोग-परुवणाणमत्थो वुच्चदे। प्राणिति जीवति एभिरिति प्राणाः। के ते? पत्र्चेन्द्रियाणि मनोबलं वाग्बलं कायबलं उच्छ्वासनिःश्वासौ आयुरिति । नैतेषामिन्द्रिय१ (मु. मिन्द्रियाणामे--।) प्राणानामेकेन्द्रियादिष्वन्तर्भावः; चक्षुरादिक्षयोपशमनिवन्धनानामिन्द्रिय२ (मिन्द्रियाणामे--।) प्राणानामेकेन्द्रियादिष्वन्तर्भावः; चक्षुरादिक्षयोपशमनिवन्धनानामिन्द्रिय२ (मु.णेन्द्रियाणां---।) प्राणानामेकेन्द्रियादिजातिभिः-साम्याभावात्। नेन्द्रियपर्याप्तावन्तर्भावः; चक्षुरिन्द्रियाद्यावरणक्षयोपशमलक्षणेन्द्रिय-प्राणानां क्षयोपशममपेक्ष्य३ (मु. क्षयोप-शमापेक्षया) बाहयार्थग्रहणशक्त्युत्पत्तिनिमित्तपुद्गलप्रचयस्य चैकत्वविरोधात्। न च मनोबलं मनःपर्याप्तावन्तर्भवति; मनो-वर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नात्मबलस्य चैकत्वविरोधात्। नापि वाग्बलं भाषापर्याप्तावन्तर्भवति; आहार-वर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नायाः श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यपर्यायेण परिणमनशक्तेश्च साम्याभावात्। नापि कायब-लं शरीरपर्याप्तावन्तर्भवति; वीर्यान्तरायजनितक्षयोपशमस्य खलरसभागनिमित्तशक्तिनिबन्धनपुद्गलप्रचयस्य

वीस प्ररुपणाओंमेंसे तीन प्ररुपणाओंको छोडकर शेष प्ररुपणाओंका अर्थ पहले कह आये हैं। अतः यहांपर प्राण, संज्ञा, और उपयोग इन तीन प्ररुपणाओंका अर्थ कहते हैं। जिनके द्वारा जीव प्राणिति अर्थात् जीता है उन्हें प्राण कहते हैं।

शंका --- वे प्राण कौनसे हैं?

समाधान --- पांच इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल, कायबल, उच्छ्वास-निश्वास और आयु ये दश प्राण हैं।

इन पांचों इन्द्रिय प्राणोंका एकेन्द्रियजाति आदि पांच जातियोंमें अन्तर्भाव नहीं होता है; क्योंकि, चक्षुरिन्द्रियावरण आदि कर्मोंके क्षयोपशमनिमित्तक इन्द्रियप्राणोंकी एकेन्द्रियजाति आदि जातियोंके साथ समानता नहीं पाई जाती है। उक्त पांचों इन्द्रियप्राणोंका इन्द्रियपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, चक्षुरिन्द्रिय आदिको आवरण करनेवाले कर्मोंके क्षयोपशमस्वरुप इन्द्रिय प्राणोंको और क्षयोपशमकी अपेक्षा बाह्य पदार्थोंको ग्रहण करनेकी शक्तिके उत्पन्न करनेमें निमित्तभूत पुद्गलोंके प्रचयको एक होनेमें विरोध आता है। उसी प्रकार मनोबलका मन:पर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, मनोवर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्गलप्रचयको और उससे उत्पन्न हुए आत्मबल (मनोबल) को एक होनेमें विरोध आता है। तथा वचनबल भी भाषापर्याप्तिमें अन्तर्भूत नहीं होता है, क्योंकि, आहारवर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्गलप्रचयका और उससे उत्पन्न हुई श्रोत्रेन्द्रियके द्वारा ग्रहण करने योग्य पर्यायसे परिणमन करनेरुप शक्तिका परस्पर समानताका अभाव है। तथा कायबलका भी शरीरपर्याप्तिमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, वीर्यान्तरायके उदयाभाव और उपशमसे उत्पन्न हुए क्षयोपशमकी और खल-रसभागकी निमित्तभूत शक्तिके कारण पुद्गलप्रचयकी एकता नहीं पाई जाती है। इसी प्रकार उच्छ्वासनि:श्वास प्राण कार्य है जो आत्मोपादानकारणंक होता है तथा उच्छ्वासनि:श्वासपर्याप्ति कारण है जो पुद्गलो-दाननिमित्तक होती है, अतएव इन दोनोंमें भेद

चैकत्वाभावात्। तथोच्छ्वासनिश्वासप्राणपर्याप्त्यो: कार्यकारणयोरात्मपुद्गलोपादानयोर्भेदोऽभिधातव्य इति।

सण्णा चउव्विहा आहार-भय-मेहुण-परिग्गह-सण्णा१ (मु. सण्णा चेदि। मैथुनसंज्ञा) चेदि। उत्तं च-

इह जाहि वाहिया वि य, जीवा पावंति दारुणं दुक्खं ।

सेवंता वि य उभये, ताओ चत्तारि सण्णाओ ।। २२३ ।।

आहारदंसणेण य, तस्सुवजोगेण ओमकोठाए ।

सादिदरुदीरणाए, हवदि हु आहारसण्णा हु ।। २२४ ।।

अइभीमदंसणेण य, तस्सुवजोगेण ओमसत्तीए ।

भयकम्मुदीरणाए, भयसण्णा जायदे चदुहिं ।।२२५ ।।

पणिदरसभोयणेण य, तस्सुवजोगे कुसीलसेवाए।

वेदस्सुदीरणाए, मेहुणसण्णा हवदि एवं ।। २२६ ।।

उवयरणदंसणेण य, तस्सुवजोगेण मुच्छिदाए य ।

लोहस्सुदीरणाए, परिग्गहे जायदे सण्णा ।। २२७ ।।

मैथुनसंज्ञा वेदस्यान्तर्भवतीति चेन्न, वेदत्रयोदयसामान्यनिबन्धनमैथुनसंज्ञाया वेदोदयविशेषलक्षणवेदस्य चैकत्वा-नुपपत्तेः। परिग्रहसंज्ञापि न लोभेनैकत्वमास्कन्दति;

समझ लेना चाहिये।

संज्ञा चार प्रकारकी है; आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा। कहा भी है-

इस लोक में जिनसे बाधित होकर तथा जिनका सेवन करते हुए ये जीव दोनों लोकोंमें दारुण दु:खको प्राप्त होते हैं उन्हें संज्ञा कहते हैं। उसके चार भेद है- आहार संज्ञा भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रह संज्ञा ।। २२३ ।।

आहारके देखनेसे, उसका उपयोग होनेसे, पेट के खाली होने से तथा असाता वेदनीय कर्मकी उदीरणा होने से जीवके नियमसे आहारसंज्ञा होती है ।। २२४ ।।

अत्यन्त भयानक पदार्थोंके देखनेसे, उनका ख्याल होनेसे, शक्ति के हीन होनेसे और भय कर्म की उदीरणा होनेसे इन चार कारणोंसे भयसंज्ञा उत्पन्न होती है ।। २२५ ।।

स्वादिष्ठ और गरिष्ठ रस युक्त पदार्थोका भोजन करनेसे, उस ओर उपयोग होनेसे, कुशील का सेवन करनेसे और वेदकर्म की उदीरणा होनेसे मैथुन संज्ञा उत्पन्न होती है ।। २२६ ।।

भोगोपभोग के उपकरण देखने से, उनका ख्याल होनेसे, मुर्छा के होने से और लोभ कर्म की उदीरणा होने से परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होती है ।। २२७ ।।

शंका --- मैथुनसंज्ञाका वेदमें अन्तर्भाव हो जायगा?

समाधान --- नहीं, क्योंकि, तीनों वेदोंके उदय सामान्यके निमित्तसे उत्पन्न हुई मैथुनसंज्ञा और वेदोंके उदय-विशेष-स्वरुप वेद, इन दोनोंमें एकत्व नहीं बन सकता है।

लोभोदयसामान्यस्यालीढबाह्यार्थ लोभतः परिग्रहसंज्ञा१ (मु. संज्ञामादधानतो) व्यपदेशमादधानतो भेदात्। यदि चतस्त्रोऽपि संज्ञा आलीढबाह्यार्थाः, अप्रमत्तानां संज्ञाभावः स्यादिति चेन्न, तत्रोपचारतस्तत्सत्त्वाभ्युपगमात्। स्वपरग्रहणपरिणाम उपयोगः२ (मु. उपयोगः। न स.....)। उत्तं च-

वत्थुणिमित्तं भावो, जादो जीवस्स जो दु उवजोगो ।
सो दुविहो णायव्वो, सायरो चेव अणायरो ।।२२८ ।।
मदिसुदओहिमणेहिं य, सगसगविसये विसेसविण्णाणं ।
अंतोमुहुत्तकालं, उवजोगो सो दु सायारो ।।२२९ ।।
इंदियमणोहिणा वा, अत्थे अविसेसिदूण जं गहणं
अंतोमुंहुत्तकालं, उवजोगो सो अणायारो ।।२३० ।।
सागारमणागारं केवलिणं युगवदेव उवओगे
सादी अणंतकालो पच्चक्खो सव्वभावगदो ।।२३१ ।।

परिग्रहसंज्ञा भी लोभकषायके साथ एकत्वको प्राप्त नहीं होती है; क्योंकि, बाह्य पदार्थोको विषय करनेवाला होनेके कारण परिग्रहसंज्ञा व्यपदेशको धारण करनेवाले लोभसे लोभकषायके उदयरुप सामान्यलोभका भेद है। अर्थात् बाह्य पदार्थोंके निमित्तसे जो लोभ होता है उसे परिग्रहसंज्ञा कहते हैं, और सामान्य लोभकषायके उदयसे उत्पन्न हुए परिणामोंको लोभ कहते हैं।

शंका --- यदि ये चारों ही संज्ञाएं बाह्य पदार्थोंके संसर्गसे उत्पन्न होती हैं तो अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती जीवोंके संज्ञाओंका अभाव हो जाना चाहिये?

समाधान --- नहीं, क्योंकि, अप्रमत्तोंमें उपचारसे उन संज्ञाओंका सद्भाव स्वीकार किया गया है।

स्व और परको ग्रहण करनेवाले परिणामविशेषको उपयोग कहते हैं। कहा भी है-

वस्तुको ग्रहण करने के लिये जीव का जो भाव होता है उसे उपयोग कहते है। उसकेदो भेद हैं - साकार उपयोग और निराकार उपयोग ।। २२८ ।।

मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मन:पर्ययज्ञान के द्वारा अन्तर्मुहुर्त काल पर्यन्त अपने-अपने विषय का जो विशेष ज्ञान होता है उसे साकार उपयोग कहते है ।। २२९ ।।

इन्द्रिय, मन और अवधि के द्वारा अन्तमुहुर्त काल पर्यन्त पदार्थोंकी विशेषता किये विना जो ग्रहण होता है उसे निराकार उपयोग कहते है ।। २३० ।।

केवलियों का साकार और अनाकार उपयोग एकसाथ होता है। वह सादि होकर भी अनन्तकालतक रहनेवाला होता है और वह प्रत्यक्ष सब पदार्थोंको ग्रहण करनेवाला होता है ।। २३१ ।।

न स ज्ञानदर्शनमार्गणयोरन्तर्भवति; ज्ञानदृगावरकर्मक्षयोपशमस्य तदुभयकारणस्योपयोगत्वविरोधात् ”

अथ स्यादियं विंशतिविधा प्ररुपणा किमु सूत्रेणोक्ता उत नोक्तेति? किं चात:? यदि नोक्ता, नेयं प्ररुपणा भवति ; सूत्रानुक्तप्रतिपादनात्। अथोक्ता, जीवसमासप्राणपर्याप्त्युपयोगसंज्ञानां मार्गणासु यथान्तर्भावो भवति तथा वक्तव्यमिति। न द्वितीयपक्षोक्तदोषोऽनभ्युपगमात्। प्रथमपक्षेऽन्तर्भावो वक्तव्यश्चेदुच्यते। पर्याप्तिजीवसमासा: कायेन्द्रियमार्गण१ (मार्गणयो-र्लीना: मु.।) योरंतर्णिलीना:; एकद्वित्रिचतु:पञ्चेन्द्रियसूक्ष्मबादर पर्याप्तापर्याप्तभेदानां तत्र प्रतिपादितत्वात्। उच्छ्वास-भाषामनोबलप्राणाश्च तत्रैव निलीना:, तेषां पर्याप्तिकार्यत्वात्। कायबलप्राणो योगमार्गणातो निर्गत:; बललक्षणत्वाद्यो-गस्य। आयु:प्राणो गतौ निलीन:; द्वयोरन्योन्याविनाभावित्वात्। इन्द्रियप्राणा

वह उपयोग ज्ञानमार्गणा और दर्शनमार्गणामें अन्तर्भूत नहीं होता है; क्योंकि, ज्ञान और दर्शन इन दोनोंके कारणरुप ज्ञानावरण और दर्शनावरणके क्षयोपशमको उपयोग माननेमें विरोध आता है।

शंका --- यह वीस प्रकारकी प्ररुपणा रही आओ, किन्तु यह बतलाइये कि यह प्ररुपणा सूत्रानुसार कही गई है, या नहीं?

प्रतिशंका --- इस प्रश्नसे क्या प्रयोजन है?

शंका --- यदि सूत्रानुसार नहीं कही गई है तो यह प्ररुपणा नहीं हो सकती है, क्योंकि, यह सूत्रमें नहीं कहे गये विषयका प्रतिपादन करती है। और यदि सूत्रानुसार कही गई है, तो जीवसमास, प्राण, पर्याप्ति, उपयोग और संज्ञाप्ररुपणाका मार्गणाओंमें जिस प्रकार अन्तर्भाव होता है उस प्रकार कथन करना चाहिये?

समाधान --- दूसरे पक्षमें दिया गया दूषण तो यहां पर आता नहीं है; क्योंकि, वैसा स्वीकार नहीं किया है। तथा प्रथम पक्षमें जो जीवसमास आदिके चौदह मार्गणाओंमें अन्तर्भाव करनेकी बात कही है, उसे कहते है। पर्याप्ति और जीवसमास प्ररुपणा काय और इन्द्रिय मार्गणामें अन्तर्भूत हो जाती हैं; क्योंकि, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्तरुप भेदोंका उक्त दोनों मार्गणाओंमें प्रतिपादन किया गया है। उच्छ्वासनि:श्वास, वचनबल और मनोबल इन तीन प्राणोंका भी उक्त दोनों मार्गणाओंमेंही अन्तर्भाव होता है, क्योंकि, ये तीनों प्राण पर्याप्तियोंके कार्य हैं। कायबलप्राण योगमार्गणासे निकला है; क्योंकि, योगका लक्षण बल है। आयुप्राण गतिमार्गणामें अन्तर्भूत है; क्योंकि, आयु और गति ये दोनों परस्पर अविनाभावी हैं। अर्थात् विवक्षित गतिके उदय होने पर तज्जातीय आयुका उदय होता है और विवक्षित आयुके उदय होने पर तज्जातीय गतिका

ज्ञानमार्गणायां निलीना:; भावेन्द्रियस्य ज्ञानावरणक्षयोपशमरुपत्वात्१ (इंदियकाए लीणा जीवा पज्जत्ति आणभासमणो। जोगे काओ णाणे अक्खा गदिमग्गणे आऊ।। गो. जी.५.)। आहारे या तृष्णा कांक्षा साहारसंज्ञा। सा च रतिरुपरवान्मोहपर्याय:। रतिरपि रागरुपत्वान्मायालोभयोरन्तर्भवति। तत: कषायमार्गणायामाहारसंज्ञा द्रष्टव्या। भयसंज्ञा भयात्मिका। भयत्र्च क्रोधमानयोरन्तर्लीनम्, द्वेषरुपत्वात्। ततो भयसंज्ञापि कषायमार्गणाप्रभवा। मैथुनसंज्ञा वेदमार्गणाप्रभवा, स्त्रीपुंनपुंसकवेदानां तीव्रोदयरुपत्वात्। परिग्रहसंज्ञापि कषायमार्गणोद्भूता, बाह्यार्थालीढलोभरुपत्वात् २(आहारे या तृष्णा

कांक्षा साहारसंज्ञा। सा च रतिरुपरवान्मोहपर्याय:। रतिरपि रागरुपत्वान्मायालोभयोरन्तर्भवति। तत: कषायमार्गणायामाहारसंज्ञा द्रष्टव्या। भयसंज्ञा भयात्मिका। भयञ्च क्रोधमानयोरन्तर्लीनम्, द्वेषरुपत्वात्। ततो भयसंज्ञापि कषायमार्गणाप्रभवा। मैथुनसंज्ञा वेदमार्गणाप्रभवा, स्त्रीपुंनपुंसकवेदानां तीव्रोदयरुपत्वात्। परिग्रहसंज्ञापि कषायमार्गणोद्भूता, बाह्यार्थालीढलोभरुपत्वात् २(मायालोहे रदिपुव्वाहारं कोहमाणगम्हि भयं। वेदे मेहुणसण्णा लोहम्हि परिग्गहे सण्णा ।। गो.जी.६.) । साकारोपयोगो ज्ञानमार्गणायामनाकारोपयोगो दर्शनमार्गणायाम्, तयोर्ज्ञानदर्शनरुपत्वात्३ (। साकारोपयोगो ज्ञानमार्गणायामनाकारोपयोगो दर्शनमार्गणायाम्, तयोर्ज्ञानदर्शनरुपत्वात्३ (सागारो उवजोगो णाणे मग्गम्हि दंसणे मग्गे। अणगारो उवजोगो लीणो त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं।। गो.जी.७.)। न पौनरुक्त्यमपि; कथञ्चित्तेभ्यो भेदात्। प्ररुपणया किं प्रयोजनमिति चेदुच्यते, सूत्रेण सूचितार्थानां स्पष्टीकरणार्थ विंशतिविधानेन प्ररुपणोच्यते।

उदय होता है। इन्द्रियप्राण ज्ञानमार्गणामें अन्तर्लीन हो जाते हैं, क्योंकि, भावेन्द्रियां ज्ञानावरणके क्षयोपशमरुप होती हैं। आहारके विषयमें जो तृष्णा या आकांक्षा होती है उसे आहारसंज्ञा कहते हैं और वह रतिस्वरुप होनेसे मोहकी पर्याय (भेद) है। रति भी रागरुप होनेके कारण माया और लोभमें अन्तर्भूत होती है। इसलिये कषायमार्गणामें आहारसंज्ञा समझना चाहिये। भयसंज्ञा भयस्वरुप है, और भय द्वेषरुप होनेके कारण क्रोध और मानमें अन्तर्भूत है, इसलिये भयसंज्ञा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई है। मैथुनसंज्ञा वेदमार्गणासे उत्पन्न हुई है; क्योंकि, वह मैथुनसंज्ञा स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके तीव्र उदयरुप है। परिग्रहसंज्ञा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई हैं; क्योंकि, यह संज्ञा बाह्य पदार्थोमें व्याप्त लोभरुप है। साकार उपयोग ज्ञानमार्गणामें और अनाकार उपयोग दर्शनमार्गाणामें अन्तर्भूत होते हैं; क्योंकि, वे दोनों ज्ञान और दर्शनरुप ही हैं। ऐसा होते हुए भी उक्त प्ररुपणाओंके स्वतन्त्र कथन करनेमें पुनरुक्ति दोष भी नहीं आता है; क्योंकि, मार्गणाओंसे उक्त प्ररुपणाएं कथंचित् भिन्न है।

शंका --- प्ररुपणा करनेसे क्या प्रयोजन हैं?

समाधान --- सूत्रके द्वारा सूचित पदार्थोंके स्पष्टीकरण करनेके लिये वीस प्रकारसे प्ररुपणा कही जाती है।

सामान्यसे मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि, संयतासंयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरणप्रविष्ट-शुध्दि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक,

----

तत्थ, 'ओघेण अत्थि१ (मिच्छाइट्ठी सिध्दा. चेदि मु.) मिच्छाइट्ठी० सिध्दा चेदि२ (जी. सं सू. ९.२३.)' एदस्स ओघ-सुत्तस्स ताव परुवणा वुच्चदे। तं जहा-० अत्थि चोद्दस गुणट्ठाणाणि। चोद्दस-गुणट्ठाणादीद-गुणट्ठाणं पि अत्थि। अत्थि चोद्दस जीवसमासा। के्त्ते? एइंदिया दुविहा बादरा सुहुमा। बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता। सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता। वीइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता। तीइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता। चउरिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता। पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो। सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता। असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जता इदि३ (जी. सं. सू. ३४-३५)। एदे चोद्दस

अनिवृत्तिकरण प्रविष्ट-शुध्दि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक, सूक्ष्मसांपराय-प्रविष्ट-शुध्दि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक, उपशांतकषायवीतराग-छद्मस्थ, क्षीणकषाय-वीतराग-छद्मस्थ, सयोगकेव्वली, अयोगकेव्वली और सिध्द जीव होते हैं।' पहलें इस ओघ सूत्रकी प्ररुपणा कहते हैं। वह इस प्रकार है- चौदह गुणस्थान हैं और चौदह गुणस्थानोंसे अतीत-गुणस्थान भी है। चौदह जीवसमास है।

शंका --- वे चौदह जीवसमास कौनसे हैं?

समाधान --- 'एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, बादर और सूक्ष्म। बादर जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त। सूक्ष्म जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त। द्वीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त। त्रीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त। चतुरिन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त। पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, संज्ञी और असंज्ञी। संज्ञी जीव दो

प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त। असंज्ञी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त।' इस प्रकार ये चौदह जीवसमास होते हैं। अतीत-जीवसमास भी जीव होते हैं। कहा भी है-

----

०सामान्य जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सं.	द.	ले.	भ.	स.	सं.	आ.	उ.
१४ अतीत गुणस्थान	१४ अतीत जीवसमास	६ प. ६ अ. ५ प. ५ अ. ४ प. ४ अ. अतीत पर्याप्ति	१०, ७९, ७८, ६७, ५६,४४,३४,२१, अतीत प्राण	४ क्षीणसंज्ञा	४ सिद्धगति	५ अतीतजाति	६ अतीतकाय	१५ अयोग	३ अपगतवेद	४ अकषाय	८	७ अनुभय	४	द्र. ६ भा. ६ अलेश्या	२ भ. अ. अनुभय	६	२ सं. असं. अनुभय	२ आहा. अना.	२ साका. अना. युगपत् उभय उपयोग

जीवसमासा अदीदजीवसमासा१ (मु. वि. अत्थि। अत्थि ...) वि अत्थि। उत्तं च-

जेहिं अणेया जीवा, णज्जंते बहुविहा वि तज्जादी ।

ते पुण संगहिदत्था, जीवसमासात्ति विण्णेया ।। २३२ ।।

बादरसुहुमेइंदिय, बितिचउरिंदिय असण्णिसण्णी य ।

पज्जत्तापज्जत्ता, एवं ते चोद्दसा होंति ।। २३३ ।।

अत्थि छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ अदीद-पज्जत्ती वि अत्थि। आहारपज्जत्ती सरीरपज्जत्ती इंदियपज्जत्ती आणापाणपज्जत्ती भासापज्जत्ती मणपज्जत्ती चेदि एदाओ छ पज्जत्तीओ सण्णिपज्जत्ताणं। एदेसिं चेव अपज्जत्तकाले एदाओ चेव असमत्ताओ छ अपज्जत्तीओ भवंति। मणपज्जत्तीए विणा एदाओ चेव पंच पज्जत्तीओ असण्णि-पंचिंदिय-पज्जत्तप्पहुडि जाव बीइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति। तेसिं चेव अपज्जत्ताणं एदाओ चेव अणिप्पण्णाओ पंच अपज्जत्तीओ वुच्चंति। एदाओ चेव भासा२ (मु. भासामणपज्जत्तीहि) पज्जत्तीहि विणा चत्तारि पज्जत्तीओ एइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति। एदेसिं चेव अपज्जत्तकाले एदाओ चेव असंपुण्णाओ चत्तारि अपज्जत्तीओ भवंति। एदासिं छण्हम-

----

जिनके द्वारा अनेक जीव तथा उनकी अनेक प्रकार कि जातियाँ जानी जाती है, अनेक अर्थोंके संग्रह करनेवाले उन धर्मोंको जीवसमास कहते है ऐसा जानना चाहिये ।। २३२ ।।

बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरीन्द्रिय संज्ञी पंचेन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय ये सातो प्रकार के जीव पर्याप्त और अपर्याप्त के भेदसे दो प्रकार के होते है । इसलिये जीवसमास के कूल भेद चौदह बतलाये है ।। २३३ ।।

छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां और चार अपर्याप्तियां हैं। तथा अतीतपर्याप्ति भी है। आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, आनापानपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति और मन:पर्याप्ति ये छह पर्याप्तियां संज्ञी-पर्याप्तकोंके होती हैं। इन्हीं संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त-कालमें पूर्णताको प्राप्त नहीं हुई ये ही छह अपर्याप्तियां होती हैं। मन: पर्याप्तिके विना उक्त पांचों ही पर्याप्तियां असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तोंसे लेकर द्वीन्द्रिय-पर्याप्तकतक जीवोंके होती हैं। अपर्याप्तक अवस्थाको प्राप्त उन्हीं जीवोंके अपूर्णताको प्राप्त वे ही पांच

अपर्याप्तियां कहलाती हैं। भाषापर्याप्ति विना ये ही चार पर्याप्तियां एकेन्द्रिय पर्याप्तोंके होती हैं। इन्हीं एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालमें अपूर्णताको प्राप्त ये ही चार अपर्याप्तियां होती हैं। तथा इन छह पर्याप्तियोंके अभावका नाम अतीतपर्याप्ति कहते है। कहा भी है-

----

भावो अदीद-पज्जत्ती णाम। उत्तं च-

आहार-सरीरिंदिय-पज्जत्ती आणपाण-भास-मणो।
चत्तारि पंच छप्पि य एइंदिय-विगल-सण्णीणं१ (गो. जी. ११९) "२३४"

जह पुण्णापुण्णाइं गिह-घड-वत्थाइयाइं दव्वाइं ।
तह पुण्णापुण्णाओ पज्जत्तियरा मुणेयव्वा२ (गो. जी. ११८) " २३५"

अत्थि दसपाण-सत्तपाण-णवपाण-सत्तपाण अट्ठपाण-छप्पाण-सत्तपाण-पंचपाण-छप्पाण-चत्तारिपाण-चत्तारिपाण- तिण्णिपाण-चत्तारिपाण-दोण्णिपाण-एक्कपाणा अदीद-पाणो वि अत्थि। चक्खु-सोद-घाण-जिब्भा-फासमिदि पंचिंदियाणि, मणबल वचिबल कायबल इदि तिण्णि बला,३ (मु. आणापाणो।) आणावाणो आऊ चेदि एदे दस पाणा। उत्तं च-

[४](मु. पंच वि इंदिय।) पंचेविंदिय-पाणा मण-वचि-काएण तिण्णि बलपाणा ।
[५](मु. आणप्पाणप्पाणा) आणावाणप्पाणा आउगपाणेण होंति दस पाणा६ (गो.जी. १३०) " २३६"

आहार, शरीर, इन्द्रिय, आनापान, भाषा और मन ये छह पर्याप्तियां हैं। उनमेंसे एकेन्द्रिय जीवोंके चार, विकलत्रय और असंज्ञी-पंचेन्द्रियोंके पांच और संज्ञी जीवोंके छह पर्याप्तियां होती हैं ।। २३४ ।।

जिसप्रकार गृह, घट और वस्त्र आदि द्रव्य पूर्ण और अपूर्ण दोनों प्रकारके होते हैं, उसीप्रकार जीव भी पूर्ण और अपूर्ण दो प्रकारके होते हैं। उनमेंसे पूर्ण जीव पर्याप्तक और अपूर्ण जीव अपर्याप्तक कहलाते हैं ।। २३५ ।।

दश प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण होते हैं तथा अतीतप्राणस्थान भी है। चक्षुरिन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय ये पांच इन्द्रियां; मनोबल, वचनबल, कायबल ये तीन बल, श्वासोच्छ्वास और आयु ये दश प्राण हैं। कहा भी है-

पांचोंही इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल और कायबल ये तीन बलप्राण, श्वासोच्छ्वास प्राण और आयु प्राण ये दश प्राण हैं ।। २३६ ।।

एदे दस पाणा पंचिंदिय-सण्णिपज्जत्ताणं।१ (मु. आणापाणा।) आणावाण-भासा-मणेहि विणा सण्णिपंचिंदिय-अपज्जत्ताणं सत्त पाणा भवंति। दसण्हं पाणाणं मज्झे मणेण विणा णव पाणा असण्णि-पंचिंदिय-पज्जत्ताणं भवंति। एदेसिं चेव अपज्जत्ताणं भासाआणावाणपाणेहि विणा सत्त पाणा भवंति। पुव्विल्ल-णव-पाणेसु सोदिंदिय-पाणे अवणिदे चदुरिंदियपज्जत्तस्स अट्ठ पाणा भवंति । एदेसिं चेव अपज्जत्ताणं आणावाण-भासाहि विणा छप्पाणा भवंति । पुव्विल-अट्ठण्हं पाणाणं मज्झे चक्खिंदिए अवणिदे तीइंदिय-पज्जत्तयस्स सत्त पाणा भवंति। २ (मु. तीइंदियस्स ।) तीइंदियपज्जत्तयस्स वुत्तसत्तण्हं पाणाणं मज्झे घाणिंदिए अवणिदे बीइंदियपज्जत्तयस्स छप्पाणा भवंति। तेसु छसु आणावाण-भासाहि विणा बीइंदिय-अपज्जत्तयस्स चत्तारि पाणा भवंति। बीइंदिय-पज्जत्तयस्स चत्तारि

पाणा भवंति। तेसु आणावाणपाणे अवणिदे एइंदियअपज्जत्तयस्स तिण्णि पाणा भवंति४ (इंदियकायाऊणि य पुण्णापुण्णेसु पुण्णगे आणा। वीइंदियादिपुण्णे वचीमणो सण्णिपुण्णेव।। गो.जी. १३२.)। उत्तं च-

दस सण्णीणं पाणा सेसेगूणंतिमस्स वे ऊणा।
पज्जत्तेसिदरेसु य सत्त दुगे सेसगेगूणा५ (गो. जी. १३३.)

पूर्वोक्त दश प्राण पंचेन्द्रिय-संज्ञी-पर्याप्तकोंके होते हैं। आनापान, वचनबल और मनोबल इन तीन प्राणोंके विना शेष सात प्राण संज्ञी-पंचेन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं। दश प्राणोंमेंसे मनोबलके विना शेष नौ प्राण असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तकोंके होते हैं । और अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त इन्हीं जीवोंके वचनबल और आनापान प्राणके विना शेष सात प्राण होते हैं । पूर्वोक्त नौ प्राणोंमेंसे श्रोत्रेन्द्रिय प्राणको कम कर देने पर शेष आठ प्राण चतुरिन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके होते हैं। इन्हीं अपर्याप्त जीवोंके आनापान और वचनबलके विना शेष छह प्राण होते हैं। पूर्वोक्त आठ प्राणोंमेंसे चक्षु इन्द्रियके कम कर देने पर शेष सात प्राण त्रीन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके होते हैं। उन सात प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबल प्राणको कम कर देने पर शेष पांच प्राण त्रीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं। त्रीन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके कहे गये सात प्राणोंमेंसे घ्राणेनिन्द्रियके कम कर देने पर शेष छह प्राण द्वीन्द्रिय पर्याप्तकोंके होते हैं। उन छह प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबलके कम कर देने पर शेष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं। द्वीन्द्रिय-पर्याप्तकोंके कहे गये छह प्राणोंमेंसे रसनेन्द्रिय-प्राण और वचनबल-प्राणके कम कर देने पर शेष चार प्राण एकेन्द्रिय-पर्याप्तकोंके होते हैं। कहा भी है-

संज्ञी जीवोंके दश प्राण होते हैं । शेष जीवोंके एक एक प्राण कम करना चाहिये ।

१(मुद्रित प्रतौ अयं पाठो नास्ति ।) दसण्हं पाणाणं मज्झे इंदियमणपाणमवणिदे चत्तारि पाणा भवंति । तं मज्झे वचिउस्सासमवणिदे दो पाणा भवति । दसण्हं मज्झे आउगं मोत्तूण णवपाणे अवणिदे एक्कपाणो हवइ जहासंखेण सजोगि-अजोगि जिणस्स भवंति ।

दसण्हं पाणाणमभावो अदीदपाणो णाम । अत्थि चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा वि अत्थि । काओ चत्तारि सण्णाओ इदि चे ? वुच्चदे - आहारसण्णा भयसण्णा मेहुणसण्णा पिरिग्गहसण्णा चेदि । एदासिं चउण्हं सण्णाणं अभावो खीणसण्णा णाम । अत्थि चत्तारि गदीओ, सिध्दगदी वि अत्थि । अत्थि २ (अत्थि । एइंदियादी ।) एइंदियादी पंच जादीओ, अदीद-जादी वि अत्थि । अत्थि पुढविकायादी छककाया, अदीदकाओ वि अत्थि । अत्थि पण्णारस जोगा, अजोगो वि अत्थि । अत्थि तिण्णि वेदा, अवगदवेदो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि कसाया, अकसाओ वि अत्थि । अत्थि अट्ठ णाणाणि । अत्थि सत्त संजमा, णेव संजमो णेव संजमासंजमो णेव असंजमो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि दंसणाणि । दव्वभावेण छ लेस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि । भवसिध्दिया वि अत्थि, अभवसिध्दिया वि अत्थि, णेव भवसिध्दिया णेव अभवसिध्दिया वि अत्थि । छ सम्मत्ताणि अत्थि । सण्णिणो वि अत्थि, असण्णिण्णो वि अत्थि, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि ।

किन्तु अन्तिम अर्थात् एकेन्द्रिय जीवोंके दो प्राण कम होते हैं । यह क्रम पर्याप्तकोंका है । किन्तु अपर्याप्तक जीवोंके संज्ञी ओर असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात, सात प्राण होते है। तथा शेष जीवोंके उत्तरोत्तर एक एक कम प्राण होते है ।। २३६ ।।

सयोग केवली भगवानके दस प्राणोंमेंसे पांच इन्द्रियां और मनोबल कम करनेपर शेष चार प्राण होते हैं । उनमें से वचनबल और श्वासोच्छ्वासके कम कर देनेपर कायबल और आयु ये दो प्राण होते हैं । तथा चौदहवें गुणस्थानमें अयोगि जिनके केवल एक आयुप्राण होता है ।

इन दशें प्राणोंके अभावकी अतीत-प्राण संज्ञा है । चारों संज्ञाएं होती हैं और क्षीणसंज्ञा भी होती है ।

शंका-- वे चार संज्ञाएं कौनसी हैं ?

समाधान -- आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा ये चार संज्ञाएं हैं ।

इन चारों संज्ञाओंके अभावका नाम क्षीणसंज्ञा है ।

चार गतीयां हाती हैं और सिध्दगति भी है । एकेन्द्रियादि पांच जातियां होती हैं और अतीत-जातिरुप स्थान भी है । पृथिवीकाय आदि छह काय होते हैं और अतीतकाय स्थान भी है । पन्द्रह योग होते हैं ओर अयोग स्थान भी है । तीन वेद होते हैं और अपगतवेद स्थान भी हैं । चार कषायें होती हैं और अकषाय स्ाान भी है । आठ ज्ञान होते हैं । सात संयम होते हैं और संचम, संयमासंयम और असंयम रहित भी स्थान है । चार दर्शन होते हैं । द्रव्य और भवके

आहारिणो वि अत्थि, अणाहारिणो वि अत्थि । सागारुवजुत्ता वि अत्थि, अणागारुवजुत्ता वि अत्थि, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि ।

पज्जत्त-विसिट्ठें असेघे भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणट्ठाणाणि, अदीदगुणट्ठाणं णत्थि; पज्जत्तेसु तस्स संभवाभावादो । सत्त जीवसमासा, अदीदजीवसमासो णत्थि; छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीआ, अदीदपज्जत्ती णत्थि । दसपाण-णवपाण-अट्ठपाण-सत्तपाण-छप्पाण-चत्तारिपाणा, अदीदपाणो णत्थि । चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा वि अत्थि; चत्तारि गदीओ, १ (मु. सिध्दगदी) सिध्दिगदी णत्थि; एइंदियादी पंच जादीओ अत्थि, अदीदजादी णत्थि; पुढवीकायादिछक्काया अत्थि, अकाो णत्थि, ओरालिय-वेउव्विय-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगेहि विणा एक्कारह जोगा अजोगो वि अत्थि; तिण्णि वेदा, अवगदवेदो वि अत्थि; चत्तारि कसाया, अकसाओ वि अत्थि; अट्ठ णाणाणि, सत्त संजमा, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो णथ्ति; चत्तारि

भेदसे छह लेश्याएं होती हैं और अलेश्यास्थान भी है । भव्यसिध्दिक जीव होते हैं, अभव्यसिध्दिक जीव होते हैं और भव्यसिध्दिक तथा अभव्यसिध्दिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है । छह सम्यक्त्व होते हैं ।संज्ञी भी होते हैं, असंज्ञी भी होते हैं और संज्ञी तथा, असंज्ञी विकल्प रहित भी स्थान होतो है । आहारक भी होते है। और अनाहारक भी होते हैं । साकार उपयोगसे युक्त भी होते

हैं; अनाकार उपयोगसे भी युक्त होते हैं और साकार उपयोंग तथा अनाकार उपयोग इन दोनोंसे युगपत् युक्त भी होते हैं ।

पर्याप्त अवस्थासे युक्त ओघालाप कहने पर- चौदहों गुणस्थान होते हैं । अतीतगुणस्थानरुप स्थान नहीं होता है, क्योंकि, पर्याप्तकोंके अतीत-गुणस्थान अर्थात सिध्द अवस्थाकी संभावना नहीं है। पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास होते हैं, किन्तु अतीत जीवसमास (सिध्द अवस्था) रुप स्थान नहीं हैं । संज्ञी जीवोंके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां और एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां होती हैं, किन्तु अतीतपर्याप्तिरुप स्थान नहीं होता है । संज्ञीके दस प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, त्रीन्द्रियके सात प्राण, द्वीन्द्रियके छह प्राण और एकेन्द्रियके चार प्राण होते हैं, किन्तु अतीत-प्राणरुप स्थान नहीं है । चारों संज्ञाएं होती हैं और क्षीणसंज्ञारुप स्थान भी होता है । चारों गतियां होती हैं, किंतु सिध्दिगति नहीं होती है । एकेन्द्रियादि पांचों जातियां होती हैं, किंतु अतीत-जातिरुप स्थान नहीं होता है । पृथिवीकाय आदि छहों काय होते है, किंतु अकायरुप स्थान नहीं होता है । औदारिकमिश्रकाययोग वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोगके विना ग्यारह योग होते हैं और अयोग-स्थान भी होता है । तीनों वेद होते हैं और अपगतवेद-स्थान भी होता है । चारों कषायें होती हैं और अकषाय-स्थान भी होता है आठों ज्ञान होते हैं सातों संयम होते हैं किंतु संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान नहीं होता है । चारों

दंसणाणि, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि; दव्वण छल्लेस्से्त्ति भणिदे सरीरस्स छव्वण्णा घेत्तव्वा १ (वण्णोदयेण जणिदो सरीस्वण्णो दु दव्वदो लेस्सा ।। गो. जी. ४९४.)भावेण छ लेस्सा त्ति भणिदे जोग-कसाया छब्भेदद्दिदा घेत्तव्वा२ (जोगपउत्ती लेस्सा कसायउदयाणुरंजिया होई ।। गो. जी. ४९०.) । भवसिध्दिया अभवसिध्दिया ३ (मु.. सिध्दिया, णव ।) अत्थि णेव भवसिध्दिया णेव `भवसिध्दिया अत्थि; छ सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि; आहारिणो अणाहारिणो; सागारुवजुत्ता ४ ( सिध्दिया, णव । ) अत्थि णेव भवसिध्दिया णेव `भवसिध्दिया अत्थि; छ सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि;

आहारिणो अणाहारिणो; सागारुवजुत्ता ४ (मु.जुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा ।) च अणागारुवजुत्ता च सागाराणगारेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि १ (वण्णोदयेण जणिदो सरीस्वण्णो दु दव्वदो लेस्सा ।। गो. जी. ४९४.)

संपधि अपज्जत्ति - पज्जाय - विसिट्ठे ओघे भण्णमाणे अत्थि मिच्छाइट्ठी सासणसध्ममाइट्ठी असंजदसम्माइट्ठी पमत्तसंजदा सजोगिकेवलि त्ति पंच गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तरि अपज्जत्तीओ, सत्तपाण-

----

दर्शन होते हैं । द्रव्य और भावके भेदसे छहों लेश्याएं होती हैं और अलेश्यासथान भी होता है । द्रव्यसे छहों लेश्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर शरीरसंबन्ध्धी छह वर्णोंका ग्रहण करना चाहिये । भावसे छहों लेश्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर छह भेदोंके प्राप्त योग और कषायोंकी मिश्रित अवस्थाका ग्रहण करना चाहिये। भव्यसिध्दिक होते है और अभव्यसिध्दिक होते हैं, किंतु भव्यसिध्दिक और अभव्यसिध्दिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान नहीं होता है । छहों सम्यक्त्व होते हैं । संज्ञी होते हैं, असंज्ञी भी होते हैं, तथा तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानकी अपेक्षा संज्ञी और असंज्ञी विकल्प रहित भी होते हैं । आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं । साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं और साकार तथा आनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

अब अपर्याप्ति - पर्यायसे युक्त ओघालाप कहने पर-मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान होते हैं। अपर्याप्तरुप सात जीवसमास होते हैं । अपर्याप्त संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां अपर्याप्त असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां और अपर्याप्त एकेन्द्रिय जीवोंके चार अपर्याप्तियां होती हैं । संज्ञी, असंज्ञी

नं १. पर्याप्त जीवोंके सामान्य - आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यी.	वे.	क	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१४	७ प.	६ प. ५ प. ४ प.	१०/९ ८/७ ६/४	४	४	५	६	११ औ मि.वै मि आ. मि. कार्म. के विना	३ अपगत	४ अकसाय	८	७	४	६ द्रव्य ६ भाव	२ भव्य अभव्य	६	२ संज्ञी असंज्ञी	२ आहार अनाहार	२ साकार अनाकार

सतपाण-छप्पाण्-पंचपाण-चत्तारिपाण-तिण्णिपाणा,चत्तारि सण्णओ अदीदसण्णा वि अत्थि ,चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि आदि-पंच जादीओ, पुढवीकायादिछक्काया, ओरालियमिस्स-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगेत्ति चत्तारि जोगा,तिण्णि वेदा,अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाया, अकसाओ वि अत्थि, मण्पज्ज-वविभ्ंगणाणेहि विणा छण्णाणाणि, चत्तारि संजमा सामाइय छेदोवट्ठावण-जहाक्खादासंजमेहि, चतरि दंसणणि, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ जम्हा सव्व-कम्मस्स विस्ससोवचओ सुक्किलो भवदि तम्हा विग्गहगदीए वट्टमाण-सव्व-जीवाणं सरीरस्स सुक्कलेस्सा भवदि। पुणो सरीरं घेत्तूण जाव पज्जत्तीओ समाण्ेदि ताव छव्वण्ण-परमाणुपुंज-

णिप्पज्जमाण्-सरीरत्तादो तस्स सरीरस्स लेस्सा काउलेस्सेत्ति भण्णदे,१ (सव्वविग्गहे सुक्का सव्वो मिस्सो देही कवीदवण्णो हवे णियमा ॥ गो.जी.४९८.) एवं दो सरीरलेस्साओ भवंति । भावेण छ लेस्सेत्ति वुत्ते ण्रइय तिरिक्ख- भवणवासिय-वाणवेंतर- जोइसियदेवाण्मपज्जत्तकाले किण्ह-णील-२.(मु. काउलेस्साओ भवंति) मणुसाण्मपज्जत्तकाले छल्लेस्साओ भवंति, सोधम्मादि-उवरिम-

----

चतुरिन्द्रिय,त्रीन्दिय और एकेन्द्रियअपर्याप्त जीवोंकी अपेक्षा क्रमसे सात प्राण, सात प्राण छह प्राण , पांच प्राण और तीन प्राण होते है । चारों सज्ञाएं होती हैं और अतीत संज्ञारुप स्थान भी होता है। चारों गतियां होती हैं। एकेन्द्रियजाति आदि पांचो जातियां होती है। पृथिवीकाय आदि छहो काय होते है! औदारिकमिश्र वैक्रियकमिश्र,आहारकमिश्र और कार्मणकाय इस प्रकार चार योग होते है। तीनों वेद होते हैं और अपगतवेदरुप भी स्थान होता है ।चारों कषाय होते है और कषायरहित भी स्थान होता है। मन:पर्यय और विभ्ंग ज्ञानके विना छह ज्ञान होते है । सूक्ष्मसांपराय ,परिहारविशुध्दि और संयमासंयमके विना सामायिक ,छेदोपस्थापना, यथाख्यात और असंयम ये चार संयम होते है। चारों दर्शन होते है। द्रव्यलेश्याकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्या होती है और भावलेश्याकी अपेक्षा छहों लेश्याएं होती है। अपर्याप्त अवस्थामें द्रव्यलेश्याकी अपेक्षा छहों लेश्याएं ही क्यां होती हैं, आगे इसीका समाधान करते हैं कि जिस कारणसे संपूर्ण कर्मोका विस्त्रसोपचय शुक्ल ही होता है, इसलिये विग्रहगतिमें विघमान संपूर्ण जीवींके शरीरकी शुक्ललेश्या होती है। तदनन्तर शरीरको ग्रहण करके जबतक पर्याप्तियोंको पूर्ण करता है तबतक छह वर्णवाले परमाणुओंके पुंजोंसे शरीरकी उत्पत्ति होती है, इसलिये उस शरीरकी कापोत लेश्या कही जाती है। इस प्रकार अपर्याप्त अवस्थामे शरीरसंबन्धी दो ही लेश्याएं होती हैं । भावकी अपेक्षा छहो लेश्याए होती हैं ऐसा कथन करने पर नारकी, तिर्यच भवनवासी , वानवयन्तर और ज्योतिषी देवोंके अपर्याप्त कालमें कष्ण , नील और कापोत लेश्याएं होती हैं , मनुष्योके अपर्याप्त कालमें क्रष्ण ,नील और कापोत लेश्याएं होती हैं, मनुष्योंके अपर्याप्त कालमें छह लेश्याऐं होती है। तथा सौधर्मादि ऊपरके देवोंके अपर्याप्त कालमें पीत, पघ और शुक्ल लेश्याएं होती हैं ऐसा

देवाणमपज्जत्तकसले तेउ -पम्म-सुक्कलेस्साओ भवंति । भवसिध्दिया अभवसिध्दिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंचसम्मत्ताणि,सण्णिणो असण्णिणे अणुभया वा, आहारिणो अणहारिणो ,सागारुवजुत्ता च १(मु. जुत्ता आणागारुवजुत्ता वा तदुभएण जुगवदुवजत्ता वि ।)अणगारुवजुत्ता च तहदुभएणुवजुत्ता च अस्थि २

नं २ अपर्याप्त जीवों के सामान्य - आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
५ १ मि. २ सा. ४अ वि. ६प्र. १३ सयो	७ अप	६अप ५ बाप ४ बापव	७ ७ ६ ५ ४ ३	४ अ. सं.	४	५	६	४ औ. मि. वै. आ. कार्म	३ अपगत	४ अक.	६ मन. विभं. विना.	४ सामा. छेय था. असं.	४	द. २ का. शु. भा. ६	२ भ. अ.	५ सम्य. विना.	२ सं. असं. अनु.	२ आहार अनाहार	२ साकार अनाकार

संपहि मिचछाइटठीणं ओघालावे भण्णमाण् अत्थि एयं गुणट्ठाणं,चोद्दस जीवसमासा,छ पज्जत्तीओ, छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण, सत्त पाण, अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाणा चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ , एइंदियजादि॰ आदि-पंचजादीओ,पुढवीकादि छक्काया,

जानना चाहिये। भव्यसिध्दिक होते हें और अभव्यसिध्दिक भी होते है । सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व होते है । संज्ञी होते है, असंज्ञी होते है और संज्ञी, असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी होते है। आहारक होते हैं और अनाहरक भी होते हैं । साकार उपयोगवाले होते है, अनाकार उपयोगवाले होते है और उन दोनों उपयोगोंसे युगपत युक्त होते है।

अब मिथ्यादृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर-एक मिथ्यात्व गुणस्थान,चौदहों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां,छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोके चार पर्याप्तियां चार अपर्याप्तियां संज्ञीके दश प्राण ,सात प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रिंयके आठ प्राण,पांच प्राण, चतुरिन्दियके आठ प्राण,छह प्राण, त्रीन्द्रियके सात प्राण ,पांच प्राण,व्दीन्द्रियके छह प्राण,चार प्राण,एकेन्द्रियाके चार प्राण,तीन प्राण चारों संज्ञाएं, चारो गतियां, एकेन्द्रियजातिको आदि लेकर पाचां जातियां पृथिवीकायको आदि लेकर छहों काय, आहारकध्दिक अथात आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तरह योग , तीनों वेद चारों कषाय, तींनो अज्ञान , असंयम चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन,

----

आहार-दुगेण विणा तेरह जोगा,तिण्णि वेदा,चत्तारि कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि,असंजमो, दो दंसणाणि,दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ,भवसिध्दिया अभवसिध्दिया अभवसिध्दिया,मिच्छतं, सण्णिणो असण्णिणो,आहारिणो अणाहारिणी,सागारुवजुत्ता च होंति ।३

नं.३ मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी .	प.	प्रा.	सं .	ˎग.	इं .	का .	यो.	वे.	क .	ज्ञा .	सं य	द.	ले.	भ .	सं .	सं ज्ञी	आ.	उ.
१. मि .	१ ४	६ प. ६ आ प. ५ प. ५ प ५ ४ ४इ प अ	१०।७ ९।७ ८।६ ७।५ ६।४ ४।३	४	४	५	६	१३ आ. व्दि .वि ना	३	४	३ अ ज्ञा.	१ अ सं.	२ च क्षु. अ च क्षु.	६ द्र ६ भा.	२ भ . अ भ .	१ मि .	२ सं. अ स.	२ आ हा र अ ना हा र	२ सा का र अ ना का र

४ नं. मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त -आलाप.

ˎगु.	जी्	प .	प्रा .	सं .	ग.	इं.	का .	यो .	वे.	क .	ज्ञा .	सं य.	द.	ले .	भ.	सं .	सं ज्ञि	आ .	उ.
१ मि .	७ प र्या	६ प ६	१ ० ९	४	४	५	६	१ ० म.	३	४	३ अ ज्ञा	१ अ स.	२ च क्षु.	६ द्र. ६	२ भ अ	१ मि .	२ सं .	१ आ हा	२ सा का

	७ प या	५ ४	८ ७ ६ ४					४ व ४ औ .१ वै. १			न		अ च क्षु.	भा .	भ.		अ सं .	र	र अ ना का र

तेसिं ४चेव मिच्छाइटठीणं पज्जत्तोधे भण्णमाण्, अत्थि एयं गुणटठाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दसपाण्-णवपाण्-अठपाण-सत्तपाण्-छप्पाण-चत्तारिपाणा , चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि- आदि

द्रव्य और भावकी अपेक्षा छहो लेश्याएं, भव्यसिध्दिक और अभव्यसिध्दिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक और असंज्ञिक, आहारक और अनाहारक , साकार (ज्ञान) उपयोगी और अनाकार(दर्शन)उपयोगी होते है l

उन्ही मिथ्यादृष्टि पर्याप्त जीवोंके ओघालाप कहने पर- एक मिथ्यात्व गुणस्थान ,पर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां , स्ंज्ञीके दश प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, त्रीन्द्रियके छह प्राण , एकेन्द्रियके चार प्राण, चारों संज्ञाएं

पंचजादीओ, पुढीवीकायादिछक्काया, दस जोगा, तिण्णि वेदा,चत्तारि कसाया, तिण्णि अण्णाणणि, असंजमो, दो दंसणाणि, दव्व -भावेहि छल्लेस्साओ, भवसिध्दिया अभवसिध्दिया, मिच्छतं,सण्णिणे असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता च अणगारुवजुत्ता च होंति l

नं. ५ मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त - आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सं य	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१ मि.	७ अ प.	६ अप ५ अप ४ अप	७ ७ ६ ५ ४ ३	४	४	५	६	३ औ. मि. वै. मि. कार्म.	३	४	२ कुम. कुश्रु	१ असं.	२ चक्षु. अच.	द्र. २ का. शु. भा. ६	२ भ अभ.	१ मि.	२ सं. असं.	२ आहार अनाहार	२ साकार अनाकार

तेंसिं ५ चेव अपज्जत्तोघे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणठाण् सत्त जीवसमासा,छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णाओ ,चत्तारि गदीओ,एइंदियजादिआदि पंच जादीओ, पुढवीकायादिछक्काया, तिण्णि जोगा,तिण्णि वेदा, चत्तारि कसाया, विभंगणाणे्ण विणा दो अण्णाणाणि, असंजमो, दो दंसणाणि, दव्वेण काऊ सुक्काओ

चारों गतियां, ऐकन्द्रियजाति आदि पाचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारकध्दिक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु

और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिध्दिक, अभव्यसिध्दिक, मिथ्यात्व,संज्ञिाक,असंज्ञिक,आहारक,साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते है ।

उन्ही मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त जीवोंके ओघालाप कहने पर - एक मिथ्यात्व गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, संज्ञीके छहो अपर्याप्तियां ,असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संज्ञीके सात प्राण , असंज्ञीके सात प्राण , चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण , त्रीन्द्रियोंके पांच प्राण , व्दीन्द्रियोंके चार प्राण , एकेन्द्रियोके तीन प्राण , चारो संज्ञाएं, चारो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचो जातियां ,पृथिवीकायादि छहोकाय, औदारिकामिश्र वैक्रियकमिश्र और कार्मण ये तीन योग , तीनों वेद, चारो कषाये ,विभंगावषिधिज्ञानके विना दो अज्ञान , असंयम ,चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और शुल्क लेश्या, भावकी अपेक्षा छहो लश्याएं ,भव्यसिध्दिक, अभव्यसिध्दिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते है ।

मावेण छ लेस्साओ, भवसिध्दिया अभवसिध्दिया, मिच्छतं सण्णिणे असण्णिणो, आहारिणी अणाहारिणी,सागारुवजुत्ता अणगारुवजुत्ता वा होंति।

सासणसम्माइठठीणमोघे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाण् दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण,चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी,तसकाओ तेरह जोगा, तिण्णि वेदा,चत्तारीकसाया , तिण्णि अण्णाणणि असंजमो, दो दंसणणि , दव्व भावेंही छल्लेस्साओ, भवसिध्दिया, सासणसम्मतं,सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता च अणगारुवजुत्ता च अत्थि ६ ।

नं.६ सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य -आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१ सा.	२ सं. पं. सं. अ.	६ प ६ अ.	१० ७	४	४	१ पं चे.	१ त्र स.	१३ आ. व्दि .वि ना.	३	४	३ अ ज्ञा.	१ अ सं	२ च क्षु. अ च.	द्र. ६ भा .६	१ भ	१ सा सा.	१ सं.	२ आहार अनाहार	२ साकार अनाकार

तेसिं चेव सासणसम्माइट्ठीणं पज्जत्ताणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोगा, तिण्णि वेदा, चत्तारि कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, दो दंसणाणि, दव्व भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिध्दिया, सासण-

----

सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर- एक दूसरा गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दश प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, आहारकव्दिकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावरुप छहों लेश्याएं, भव्यसिध्दिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि पर्याप्त जीवोंके ओघालाप कहने पर---एक दूसरा गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावरुप छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारू वजुत्ता१ (मु. जुत्तावि होंति अणागारुवजुत्ता वि) वा अणागारुवजुत्ता वा होंति७।

नं. ७ सासादन सम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

गु. जी. प. प्रा.	सं. ग.	इ.	का.	यो.वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१ १ ६ १० सा. सं. प. प.	४ ४	१ पंचे.	१ त्रस.	३ म. ४ व. ४ औ. १ वै. १	४	३ अज्ञा.	१ असं.	२ चक्षु. अचक्षु.	द्र. ६ भा. ६	१ भ.	१ सासा.	१ सं.	१ आहार	२ साकार अनाकार

तेसिं चेव अपज्जत्ताणमोघे२ (मु. अपज्जत्ताणं भण्णमाणे।) भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारिसण्णाओ३ (मु. सण्णा, तिण्णि गदीणिरय...),

णिरयगदीए विणा तिण्णिगदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोगा, तिण्णि वेदा, चत्तारि कसाया, विहंगणाणेण विणा दो अण्णाणाणि, असंजमो, दो दंसणाणि दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छल्लेसाओ, भवसिध्दिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा होंति८।

नं. ८ सासादन सम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. जी. प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१ १ ६ सा.सं. अ. अप.	७ अप.	४	३ न. विना.	१ पंचे.	१ त्रस.	३ औ. मि. वै. मि. कार्म.	३ ४	२ कुम. कुश्रु.	१ असं.	२ चक्षु. अच.	द्र. २ का. शु. भा. ६	१ भ.	१ सासा.	१ सं.	२ आहार अनाहार	२ साकार अनाकार

अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त जीवोंके ओघालाप कहने पर- एक (दूसरा) गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और श्वासोच्छ्वासके बिना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके बिना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकमिश्रके बिना अपर्याप्त-संबन्धी तीन योग, तीनों वेद, चारों कषायें, विभंग-ज्ञानके बिना दो अज्ञान, असंयम,

चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेश्या, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिध्दीक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सम्मामिच्छाइट्ठीणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाणा, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, दस जोगा, तिण्णि वेदा, चत्तारि कसाया, अण्णाण-मिस्साणि तिण्णि णाणाणि, असंजमो, दो दंसणाणि, दव्व-भावेहि छल्लेस्साओ, भवसिध्दिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा९।

नं ९ सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंकेआलाप

गु.	जी	प	प्रा	सं.	ग. इं. का. यो.	वे	क	ज्ञा	संय	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१ सम्यग्मिथ्यात्व	१ सं. प.	६	१०	४	१ १ १० पंचे त्रस. म. ४ व. ४ औ.१ वै. १	३	४	३ ज्ञान. अज्ञा. मिश्र.	१ असं.	२ चक्षु अचक्षु	द्र. ६ भा. ६	१ भ.	१ सम्यग्मिथ्यात्व	१ सं.	१ आहार	२ साकार अनाकार

असंजदसम्माइट्ठीणमोघ-परूवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दसपाण-सत्तपाणा, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोगा, तिण्णिवेदा, चत्तारि कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, दव्व-भावेहिं छल्लेस्साओ, भवसिध्दिया,

----

सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर---एक तीसरा गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबंन्धी तीन योगोंके बिना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें, अज्ञान-मिश्रित आदिके तीनों ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों लेश्याएं, भव्यसिध्दिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेष --- मिश्रगुणस्थानवाले जीव पर्याप्तक ही होते हैं, इसलिये मिश्रगुणस्थानके उक्त सामान्यालाप ही पर्याप्तकके समझना चाहिये।

असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर---एक चौथा गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दश प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीन ज्ञान, असंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों लेश्याएं, भव्यसिध्दिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन

तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा१०।

नं. १० असंयतसम्यग्दृष्टियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	सं.	ग. इं. का. यो.	वे	क	ज्ञा	संय	द.	ले.	भ	स.	संज्ञि.	आ	उ.
१ अवि.	२ सं.प. सं.अ.	६ प. ६ अ.	१० ७	४	१ १ १३ पंचे त्रस आ द्वि. विना	३	४	३ म. श्रु. अव.	१ असं.	३ के विना.	द्र. ६ भा. ६	१ भ.	३ औ. क्षा. क्षायो.	१ सं.	२ आहार अनाहार	२ साकार अनाकार

१ (मु. इट्ठीणं पज्ज...) असंजदसम्माइट्ठिपज्जत्ताणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाणा, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोगा, तिण्णि वेदा, चत्तारि कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, दव्व-भावेहिं छल्लेस्साओ, भवसिध्दिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा११ ।

नं. ११ असंयतसम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप

गु.	जी	प	प्रा	सं.	ग.	इं.	का	यो	वे	क.	ज्ञा	संय	द.	ले	भ	स.	संज्ञि	आ	उ.
१ अवि.	२ सं. प.	६ प.	१०	४	४	१ पंचे	१ त्रस	१० म. ४ व. ४ औ.१ वै. १	३	४	३ म. श्रु. अव.	१ अस.	३ के.द. विना	द्र. ६ भा. ६	१ भ.	३ औ. क्षा. क्षायो.	१ सं.	१ आहार	२ साकार अनाकार

तेसिं चेव अपज्जत्ताणमोघपरूवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमाहो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-

----

सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

असंयतसम्यग्दृष्टि पर्याप्त जीवोंके ओघालाप कहने पर--- एक चौथा गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त एक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके बिना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीन ज्ञान, असंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों लेश्याएं, भव्यसिध्दिक, औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

जादी, तसकाओ, तिण्णि जोगा, इत्थिवेदेण विणा दोण्णि वेदा, चत्तारि कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छल्लेस्साओ; णिरयादो आगंतूण मणुस्सेसुप्पण्ण-असंजदसम्माइट्‌ठीण-मपज्जत्तकाले किण्ह-णील-काउलेस्साओ लब्भंति। भवसिध्दिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, अणादिय- मिच्छाइट्‌ठी वा सादिय-मिच्छाइट्‌ठी वा चदुसु वि गदीसु उवसमसम्मत्तं घेत्तूण ठ्ठिदजीवा ण कालं करेंति। तं कथं णव्वदि त्ति वुत्ते आइरिय-वयणादो वक्खाणादो य णव्वदि। चारित्तमोहउवसामगा मदा देवेसु उववज्जंति ते अस्सिदूण अपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि। वेदगसम्मत्तं पुण देव-मणुस्सेसु अपज्जत्तकाले लब्भदि, वेदग सम्मत्तसहगद-देव-मणुस्साणमण्णोण्णगमणागमण-विरोहाभावादो। कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं तिरिक्ख-णेरइयाणमपज्जत्तकाले लब्भदि। खटयसम्मत्तं पि

उन्ही असंयतसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त जीवोंके ओघालाप कहने पर--- एक चौथा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और आनापानके बिना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कार्मण ये तीन योग, स्त्रीवेदके बिना दो वेद, चारों कषायें, मति, श्रुत और शुक्ललेश्या, भावसे छहों लेश्याएं होती हैं। छहों लेश्याएं होनेका यह कारण है कि नरकगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले असंयत-सम्यग्दृष्टी जीवोंके अपर्याप्त कालमें कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेश्याएं पायी जाती हैं। लेश्याओंके आगे भव्यसिध्दिक, तीनों सम्यक्त्व होते हैं, क्योंकी, अनादि मिथ्यादृष्टि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि जीव चारों ही गतियोंमें उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करके पाये जाते हैं, किन्तु मरणको प्राप्त नहीं होते हैं।

शंका --- यह कैसे जाना जाता है कि, उपशम-सम्यग्दृष्टी जीव मरण नहीं करते हैं?

समाधान --- आचार्योंके वचनसे और (सूत्र) व्याख्यानसे जाना जाता है कि उपशम-सम्यग्दृष्टि जीव नहीं मरते हैं। किन्तु चारित्रमोहके उपशम करनेवाले जीव मरते हैं और देवोंमें उत्पन्न होते हैं, अत: उनकी अपेक्षा अपर्याप्तकालमें उपशमसम्यक्त्व पाया जाता है। वेदकसम्यक्त्व

तो देव और मनुष्योंके अपर्याप्तकालमें पाया ही जाता है, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ मरणको प्राप्त हुए देव और मनुष्योंके परस्पर गमनागमनमें कोई विरोध नहीं पाया जाता है। कृतकृत्यवेदककी अपेक्षा तो वेदकसम्यक्त्व तिर्यच और नारकी जीवोंके अपर्याप्त कालमें भी पाया जाता है। क्षायिक सम्यक्त्व भी सम्यग्दर्शनके पहले बांधी गई आयुके बंधकी अपेक्षासे चारों ही गतियोंके अपर्याप्तकालमें पाया जाता है, इसलिये असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके अपर्याप्तकालमें तीनों ही सम्यक्त्व होते हैं ।

चदुसु वि गदीसु पुव्वायुगबंध१ (मु. पुव्वायु - बंधं) पडुच्च अपज्जत्तकाले लब्भदि तेण तिण्णि सम्मत्ताणि अपज्जत्तकाले भवंति। सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा१२।